S. S. College, Jehanabad
class – B.A Part I (Hons.)
Subject :- Psychology Paper – I
Teacher's Name – Dr. Vivekanand Sharma
e-content for Date :-
two days | 07.06.2021 & 08.06.2021

Topic – Thinking

Central and peripheral theories of Thinking.

मनोविज्ञान के क्षेत्र में चिंतन प्रक्रिया सभी मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं में अधिक महत्वपूर्ण प्रक्रिया मानी जाती है क्योंकि चिंतन प्रायः सभी मनोवैज्ञानिक क्रिया का किसी-न-किसी रूप में निर्धारक माना जाता है। सामान्यतः चिंतन के तात्पर्य एक ऐसी जटिल मानसिक प्रक्रिया से है जिसकी उत्पत्ति समस्या के साथ होती है और समस्या का समाधान हो जाने के साथ ही इसका अंत हो जाता है। इसलिए चिंतन को समस्या समाधान प्रक्रिया भी कहा जाता है। मनोवैज्ञानिकों के बीच इस बात से एकमत है कि समस्या उत्पन्न होने और उसके समाधान के बीच कौन-कौन से महत्वपूर्ण प्रक्रियाएँ सन्निहित रहती है। इस सम्बन्ध में दो दृष्टिकोण या दो प्रकार के सिद्धांत देखने को मिलता है –

① केंद्रीय सिद्धांत (Central Theory)
② परिधीय सिद्धांत (Peripheral Theory)

चिंतन के उपर्युक्त दोनों प्रकार के सिद्धांतों की संक्षिप्त व्याख्या करने के पश्चात यह देखने का प्रयास करेंगे कि चिंतन का कौन-सा सिद्धांत महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं के बारे में संतोषजनक व्याख्या प्रस्तुत करता है।

चिंतन का केंद्रीय सिद्धांत (Central Theory) सबसे पुराना सिद्धांत है और यह मस्तिष्क को ही चिंतन का आधार मानता है। चिंतन के इस सिद्धांत का विकास संरचनावादी मनोवैज्ञानिकों तथा गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों की विचारधाराओं की पृष्ठभूमि में किया गया। संरचनावादियों ने चिंतन में अन्तःनिरीक्षण को महत्व देते हुए यह बतलाया कि चिंतन वास्तव में एक केंद्रीय प्रक्रिया है। इसी तरह गेस्टाल्टवादियों ने चिंतन को मस्तिष्क का एक केंद्रीय घटना माना और इसमें सूझ को विशेष महत्व दिया है। इन दोनों विचारधाराओं के आलोक में केंद्रीय सिद्धांत यह बतलाता है कि चिंतन सम्बन्धी सभी क्रियाएँ मुख्य रूप से मस्तिष्क के अंदर होती हैं [illegible] अन्य शारीरिक क्रियाओं का कोई योगदान नहीं [illegible] की उत्तेजना से प्रायः पैदा होता है और

SHOT ON REDMI Y3
AI DUAL CAMERA

यह स्नायु प्रवाह संवेदी स्नायु के माध्यम से Cortex में पहुँचता है जहाँ आन्तरिक क्रियाएँ प्रारम्भ हो जाती है। साथ ही Cortex के सहचारी क्षेत्र में क्रियाएँ प्रारम्भ हो जाती हैं और इन क्रियाओं के फलस्वरूप भिन्न-भिन्न प्रकार के विचार तथा प्रतिमाएँ प्रकट होने लगती हैं। प्रत्यय तथा प्रतीक के सहारे ये विचार तथा प्रतिमाएँ सुसंगठित होने लगती हैं। इसी प्रक्रिया के बीच प्राणी किसी समाधान पर पहुँच जाता है और वह मानसिक स्तर पर समस्या का हल निकाल लेता है। यह तत्काल उसके अभिव्यक्ति से प्रभावित करती है, फलस्वरूप प्राणी कोई प्रतिक्रिया या व्यवहार करता है। इस तरह केन्द्रीय सिद्धान्त के अनुसार समस्या की अनुभूति और उसके समाधान-वाली क्रियाएँ मस्तिष्क में होती हैं।

इस तरह केन्द्रीय सिद्धान्त के उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि इस सिद्धान्त में केन्द्रीय संरचनाओं को चिन्तन का आधार माना गया है जो ज्यादा ठीक नहीं जान पड़ता है। इसके अतिरिक्त यह सिद्धान्त अमूर्त चिन्तन की व्याख्या करने में भी परिधीय सिद्धान्त की अपेक्षा अधिक सफल है (Vinacke, 1952)। लेकिन कुछ मनोवैज्ञानिकों ने कुछ पहलुओं पर इस सिद्धान्त की आलोचना की है जो इस प्रकार हैं:-

(i) केन्द्रीय सिद्धान्त का सबसे बड़ा दोष यह है कि इस सिद्धान्त में चिन्तन के समय पेशीय क्रियाओं के महत्व को स्वीकार नहीं किया गया है जबकि प्रयोगों से यह साबित हो गया है कि चिन्तन में पेशीय क्रियाएँ होती हैं (Davis, 1938; Freeman, 1939)।

(ii) केन्द्रीय सिद्धान्त के अनुसार चिन्तन के लिए भाषा आवश्यक नहीं है जबकि अनेक प्रयोगों से यह साबित हो गया है कि भाषा की उपस्थिति में चिन्तन प्रक्रिया सरल हो जाती है (Brain, 1963; Atkinson et al., 1998)।

(iii) केन्द्रीय सिद्धान्त के विरुद्ध एक आपत्ति यह उठाई जाती है कि इसके पक्ष में प्रयोगात्मक प्रमाणों की कमी है क्योंकि यह पता नहीं चल पाता है कि चिन्तन का आधार Cortex होता है तथा इसके कौन-कौन सी संरचनाएँ सम्मिलित रहती हैं (Osgood, 1953)

(iv) केन्द्रीय सिद्धान्त के आधार पर मूर्त चिन्तन की व्याख्या करना कठिन है। इसका कारण यह है कि अमूर्त चिन्तन की अपेक्षा मूर्त चिन्तन में पेशीय क्रियाएँ अधिक होती हैं और इस तरह यह सिद्धान्त मूर्त चिन्तन की अपेक्षा अमूर्त चिन्तन की व्याख्या करने में अधिक सफल है (Vinacke, 1952)।

(v) विभिन्न प्रयोगों द्वारा यह साबित हो गया है कि चिन्तन के समय प्रत्यंगों में पेशीय क्रियाएँ होती पायी गई हैं जबकि यह सिद्धान्त चिन्तन में पेशीय क्रियाओं के महत्व को

SHOT ON REDMI Y3
AI DUAL CAMERA

स्वीकार नहीं करता (Shaw, 1940; Thorax 1969)।

इस तरह उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि केन्द्रीय सिद्धान्त काफी दोषपूर्ण है। फिर भी इन दोषों के बावजूद मनोवैज्ञानिकों एवं शरीरक्रियाविज्ञानियों के पास कोई ऐसा प्रमाण उपलब्ध नहीं है जिसके आधार पर इस सिद्धान्त की अभिधारणाओं को गलत साबित किया जा सके।

केन्द्रीय सिद्धान्त के प्रतिकूल होकर William James (1890) तथा Watson (1924) ने चिंतन के परिधीय सिद्धान्त या उपकेन्द्रीय सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के समर्थक James माने जाते हैं जिन्होंने चिंतन में केन्द्रीय संरचना का महत्व न देकर परिधीय संरचना पर अधिक जोर दिया है लेकिन इस सिद्धान्त को एक व्यवस्थित रूप देने का श्रेय Watson को है जिन्होंने इस सिद्धान्त की व्यवहारवादी व्याख्या प्रस्तुत की और चिंतन को एक संवेदी-गत्यात्मक व्यापार के रूप में स्वीकार किया। इस सिद्धान्त के अनुसार जब कोई वातावरणीय उद्दीपक होता है तो एक संवेदी आवेग पैदा होकर संवेदी स्नायु द्वारा cortex में पहुँचता है फलस्वरूप cortex में मानसिक एक प्रक्रिया होती है। इस प्रक्रिया के कारण गति आवेग पैदा होकर किसी मांसपेशी में चला जाता है और अपेक्षित क्रिया उत्पन्न होती है। इस क्रिया के फलस्वरूप मांसपेशीय विशेष सक्रिय होकर संवेदी आवेग को जन्म देती है और यह आवेग cortex में पुनः वापस चला जाता है। cortex से संवेदी आवेग का आना और वहाँ से गत्यात्मक आवेगों का विभिन्न पेशियों में जाना उस समय तक चलता है जब तक समस्या का समाधान करने वाली अनुक्रिया नहीं हो जाती है।

इस तरह उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि केन्द्रीय सिद्धान्त चिंतन में केवल मस्तिष्क की प्रधानता को प्रधानता देता है जबकि परिधीय सिद्धान्त पेशीय क्रियाओं को प्रमुख मानता है। परिधीय सिद्धान्त स्वरयंत्र की क्रिया तथा अन्य शारीरिक क्रियाओं पर भी जोर देता है। इसलिए Watson ने कहा भी है कि चिंतन आन्तरिक भाषण (Sub-vocal Speech) है लेकिन मनोवैज्ञानिकों ने Watson की आलोचना करते हुए यह बतलाया कि चिंतन आन्तरिक स्वर आदतों के अलावा भी कुछ आन्तरिक क्रियाओं को सम्मिलित रखती है जिसमें केन्द्र की भूमिका एवं स्वरयंत्र की भाग भी शामिल है। Osgood (1953) ने भी अपने अध्ययनों में देखा कि परिधीय क्रियाओं के बिना चिंतन संभव नहीं है। Shaw (1940) ने भी अपने अध्ययन में देखा कि जब प्रयोज्यों को किसी वजन को उठाने की कल्पना करने को कहा गया तो उनके बांहों में उसी [illegible] हुई जिस तरह वजन को वास्तव में उठाने [illegible] वास्तविक रूप से वजन उठाने तथा वास्तविक

SHOT ON REDMI Y3
AI DUAL CAMERA

रूप से वर्णन उनके दोनों अवस्थाओं से होती है।

इस तरह परिधीय सिद्धान्त का सही सिद्धान्त के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि केन्द्रीय सिद्धान्त की तुलना में इस सिद्धान्त के पक्ष में बहुत अधिक प्रमाण उपलब्ध है। इसके अलावे इस सिद्धान्त के आधार पर चिंतन के विभिन्न mechanisms की व्याख्या अधिक ठीक ढंग से होती है (Vinacke, 1952)। साथ ही अध्ययनों द्वारा यह भी साबित हो चुका है कि चिंतन और भाषा के बीच धनात्मक सहसम्बन्ध है और जैसे-जैसे भाषा विकसित होते जाती है चिंतन भी अधिक कुशल होता है (Ray, 1957)। परिधीय सिद्धान्त के आधार पर सूक्ष्म चिंतन द्वारा अधिक उच्च स्तर हासिल होता है क्योंकि इस प्रकार के चिंतन में मांसपेशीय क्रियाएँ अधिक होती है (Buxton, 1981)

इस तरह स्पष्ट है कि यह सिद्धान्त केन्द्रीय सिद्धान्त की अपेक्षा चिंतन या समस्या समाधान के बीच होनेवाले महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं की व्याख्या करने में काफी सफल रहा है। फिर भी इन गुणों के बावजूद मनोवैज्ञानिकों ने इस सिद्धान्त की आलोचना की है जो इस प्रकार है :—

(i) इस सिद्धान्त की आलोचना करते हुए Thomson (1925) तथा Morgan (1943) ने यह बतलाया कि चिंतन या समस्या समाधान में हमेशा अनावृत प्रक्रियाएँ नहीं होती हैं। यह ठीक है कि चिंतन में प्रायः अनावृत प्रक्रियाएँ होती हैं परन्तु हमेशा नहीं होती हैं।

(ii) यह सिद्धान्त अमूर्त चिंतन की अपेक्षा मूर्त चिंतन की व्याख्या करने में काफी सफल रहा है (Vinacke, 1952)।

(iii) कुछ मनोवैज्ञानिकों ने यह बतलाया कि इस सिद्धान्त में संवेदी क्रियाओं तथा स्नायविक व मांसपेशियों क्रियाओं की तुलना में बहुत ही कम महत्व दिया जाता है।

(iv) चिंतन के केन्द्रीय सिद्धान्त तथा परिधीय सिद्धान्त के उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कोई भी सिद्धान्त चिंतन [illegible] की व्याख्या करने में सक्षम नहीं है। फिर भी अधिकतर मनोवैज्ञानिकों का यह विचार है कि चिंतन के सभी पहलुओं की व्याख्या दोनों सिद्धान्तों के बीच समन्वय करने से ही हो सकती है और इस तरह से दोनों सिद्धान्त एक दूसरे के विरोधी नहीं बल्कि पूरक हैं। इस सम्बन्ध में Osgood (1953) ने भी कहा है — "Perhaps the most reasonable view is a compromise; the development of symbolic process may require peripheral mediation which becomes telescoped to a largely [illegible] in the mature individual."

—x——x—